गज़ल

नवीन माथुर पंचोली

सागर गहरा कितना क्या है।
मछुआरों ने ही समझा है।

तेज हवा, लहरों से लड़ना,
पतवारों की जीवटता है।

गिर-उठकर चलना कश्ती ने,
तूफानों से ही सीखा है।

भाप बने या बर्फ वही जल,
जाकर सागर में गिरना है।

सूरज - अग्नि से बनकर भी,
धरती का जल से रिश्ता है।

मंथन के दौरान जो चाहा,
सब कुछ सागर से निकला है।

ख़ुद के हाल रहा करती है।
दुनियाँ अपने मतलब की है।

रहती हैं गाँठो में उलझी,
रिश्ते दारी जो कच्ची है।

सपना चाहे हो आँखों का,
सोच मग़र मन कीअपनी है।

देखी थी जो बरसों पहले,
उसको हमने अब समझी है।

मिलते हैं बस उतने हमसे,
जिनको हमसे हमदर्दी है।

चहरे पर हैं कितने चहरे,
कौन यहाँ असली-नकली है।

इशारा जब हमें मिलता नहीं है।
निशाना दूर तक लगता नहीं है।

कि जिस पर दूर तक आसानियाँ हैं,
कहीं वो रास्ता दिखता नहीं है।

उठायें मुश्किलें जिसमें हमेशा,
हमें वो क़ायदा जँचता नहीं है।

छुपाती है ज़मीं ही रुख पलटकर,
कभी सूरज कहीं छुपता नहीं है।

चले आना, चले जाना भुलाकर,
कभी ये सिलसिला रुकता नहीं है।

ख़ुशी पाकर जताये ग़म कभी वो,
किसी से वक़्त ये कहता नहीं है।

कितने चहरे बदलोगे।
सच धोखे में रक्खोगे।

समझोगे उतना सबको,
जितना ख़ुद को समझोगे।

होगा तब अहसास नया,
जब भीतर तक उतरोगे।

बादल हो या धूल-धुँआ,
मानेंगे , जब बरसोगे ।

लोग सयाने कहते हैं,
माँग सकोगे , जब दोगे ।

होगा तब ही मन हल्का,
जब सब अपनी कह लोगे।

अमझेरा धार म. प्र.

ISSN:2583-8849